ORIGINAL RESEARCH PAPER

Social Science

Volume - 7 | Issue - 2 | February - 2017 | ISSN - 2249-555X | IF : 3.919 | IC Value : 79.96

"पर्यावरण एवं नैतिकता"

KEYWORDS

डॉ. लाखा राम चौधरी

पीएच.डी.(लोक प्रशासन) कार्यालय प्रधान महालेखाकार(लेखापरीक्षा) हरियाणा, चण्डीगढ़ में लेखा परीक्षक के पद पर कार्यरत

डॉ विद्यानिवास मिश्र का कथन है "प्रकृति की संवेदनशीलता मानव को प्रभावित करती है, किन्तु जहाँ औद्योगिक विकास से अंधे मानव ने प्रकृति को चुनौती माना और उस पर विजय प्राप्त करने की इच्छा करने लगा।" यहीं से मानव और प्रकृति का संघर्ष आरम्भ हुआ।

मैकाइवर तथा पेज ने लिखा है कि मनुष्य एक पर्यावरण में जन्म लेता है, उसमें बढ़ता और प्रौढ़ होता है। उसका सारा शरीर, उसके जीवन की रचना आदि सब कुछ उसके भूत जीवन तथा भूत पर्यावरण की उत्पति है। पर्यावरण तो जीवन के बीज कोष में भी उपस्थित रहता है। शायद ही ऐसा कोई जीवधारी हो जो बिना उचित पर्यावरण के भी अपने अस्तित्व को बनाये रख सका है जिसमें उसका समायोजन संभव हो पाता है। आज देश के सभी वर्ग, व्यवसाय और विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत लोग यह महसूस करते हैं कि हमारे जीवन के नैतिक मानदण्ड गिर गये हैं और उनमें निरन्तर गिरावट आ रही है। मनुष्य के अनैतिक आचरण से जहाँ पर्यावरण सहित लगभग सभी क्षेत्रों में पतन हुआ है वहीं अच्छे आचरण और सामाजिक स्वीकृति से किये जाने वाले व्यावहारिक क्रियाकलापों से आशातीत उत्थान की आशा भी बनी है। यह आवश्यक नहीं कि प्रत्येक विकास किसी विनाश से ही सम्बन्धित हो। प्रकृति ने मनुष्य को सोचने, विचारने और कार्य करने की योग्यता और क्षमता दी है। वह पर्यावरण को अपने हिसाब से परिवर्तित कर सकता है। मनुष्य सृष्टि का सर्वाधिक बुद्धिवान एवं चिंतनशील प्राणी है। प्रकृति ने जीव-जंतुओं, वनस्पति, नदी-पहाड़, वायु, जल, खनिज सम्पदा आदि की रचना की है। प्रकृति के द्वारा प्रदत्त विभिन्न आयामों में संतुलन बनाये रखने से पर्यावरण शुद्ध बना रह सकता है जो उसके विकास एवं प्रगति में सहायक सिद्ध हो सकता है। प्रकृति द्वारा प्रदत्त संतुलन के साथ छेड़-छाड़ कर बिगाड़ने का दुःसाहस करता है तो अन्य घटकों को परोक्ष व अपरोक्ष रूप से हानि होती है। मनुष्य के लालन-पालन से लेकर उसकी सभी क्षेत्रों में प्रगति व विकास के पूरे क्रम का अवलोकन करें तो प्रतीत होता है कि यह जीवित रहने के लिए हमारी सभी प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति प्रकृति के द्वारा ही करते आये हैं। सही शिक्षा की कमी, व्यक्तिगत उत्तरदायित्वपूर्ण भावना के विकास में कमी, तकनीकी की अपूर्णता एवं पूर्ण ज्ञान का न होना, प्रकृति के बारे में पूर्व एवं पश्चिम का अलग-अलग दृष्टिकोण दृष्टिगोचर हो रहा है। इस तरह के कृत्य अनैतिकता से ओत-प्रोत तो हैं ही, साथ ही विश्व में बसे मनुष्य मात्र के लिये हानिकारक सिद्ध हो सकता है। पर्यावरणविदों का मानना है कि मानव खुद अपने कर्मो से अपना विनाश कर रहा है। इनका इशारा **प्रकृति से छेड़छाड़ और ग्लोबल वार्मिंग की ओर है।** वस्तुतः मानव ने अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रकृति का असंतुलित दोहन किया, जिससे वह हमारे प्रतिकूल हो गई है। अब तो मनुष्य एवं मनुष्येतर प्राणियों के जीवन का संकट उत्पन्न हो गया है।

मनुष्य प्रकृति की श्रेष्ठतम कृति है तो उसका उत्तरदायित्व है कि पर्यावरण में संतुलन को बनाये रखे। मनुष्य अपने स्वार्थ एवं विलासिता में डूबकर संतुलन को बिगाड़ रहा है। मनुष्य एक न्यासी है, जिसे आने वाली पीढ़ी को प्रकृति को उन्नत स्थिति में प्रदान करनी है जो उसका नैतिक कृत्य ही समझा जायेगा। सामान्यतः मानव प्रकृति से सामूहिकता एवं मानव भावना से ओत-प्रोत है। वह अनावश्यक रूप से प्रकृति के साथ क्रूरता के विरूद्ध रहते हुए उससे प्रेम करने में ही विश्वास करता है। चाहे स्वार्थवश उसे विध्वंस करने के कार्यो में संलग्न क्यों न हों, आत्मा से वह उसे सर्वोपरि मानता है। किसी भी स्तर पर कोई क्षेत्र ऐसा नहीं है जो नैतिक पतन का शिकार नहीं हुआ हो। परिवार, समाज, प्रदेश और देश स्तर पर सभी व्यक्ति इससे पीड़ित हैं और विडम्बना यह है कि न तो किसी को इसे रोकने की इच्छा है और न ही कोई अकेले अथवा मिलकर आवाज उठाते हैं। बहुत ही कम समुदायों में केवल चर्चा होती है और कोसते हैं अन्य सभी को, लेकिन स्वयं अपने में परिवर्तन नहीं लाते। आधुनिकता के बदलते परिवेश में पर्यावरण का महत्वपूर्ण व सराहनीय योगदान है। स्वस्थ पर्यावरण ही जीवन जगत की आधारशिला है। परन्तु वर्तमान समय में विकास की अँधी दौड़ में जाने-अनजाने मानव के द्वारा ही यह सुरक्षा कवच नष्ट भ्रष्ट हो रहा है। नित नये आयामों को प्राप्त करने की, स्पर्श करने की, लिप्सा में हमने अपने ही हाथों अपने विनाश का मार्ग निर्मित कर लिया है। प्रकृति प्रदत्त उन समस्त उपहारों का हमने बड़ी ही निर्ममता के साथ दोहन किया है, कि आज हमारी सभ्यता विनाश के मुख पर पहुँच गई है। प्रकृति के अत्यधिक शोषण के फलस्वरूप सामने आया- **'पर्यावरण का विकृत और संहारक रूप।'** गांधी जी का कथन है- **"प्रकृति मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति तो कर सकती थी परन्तु लालच की नहीं।"** मनुष्य अपने जीवन की प्रथम अवस्था से ही पर्यावरण का दोहन करना प्रारम्भ कर देता है। प्राचीन काल से लेकर वर्तमान समय तक मनुष्य ने सफलता एवं विकास के अनेक पायदान चढ़े हैं। यहाँ तक कि मनुष्य के अन्दर विकास की इतनी असीम इच्छा हो गयी है कि इस वसुंधरा का त्याग कर चाँद और मंगल ग्रह पर जीवन की संभावनाएं तलाश कर वहाँ पर स्थायी रूप से निवास स्थान बनाने पर भी विचार कर रहा है। मनुष्य की इस सोच के कारण आज पर्यावरण दूषित होता जा रहा है। यह सब नैतिकता के घटते स्तर की वजह से हो रहा है।

मानव का प्रकृति से गहरा सम्बन्ध है। इस सम्बन्ध में प्रकृति पर विजय प्राप्त करने का दृष्टिकोण पश्चिम के लोगों का है। जबकि भारतीय दृष्टिकोण में प्रकृति हमारे लिए पूजनीय रही है। भारतीय मूल्य प्रकृति को पोषण करने का है, दोहन करने का, ना कि शोषण करने का, अतः इसे नैतिक कृत्य समझा जा सकता है। लेकिन दुर्भाग्य यह है कि भारतीय नागरिक भी पश्चिम के भौतिकवादी विकास की अंधी दौड़ और चका चौंध संस्कृति से प्रभावित होकर पानी के स्त्रोतों, हवा, नदियों व जमीन को प्रदूषित करने में अग्रसर होते जा रहे हैं, जिससे पर्यावरण असंतुलन बढ़ता ही जा रहा है, जो नैतिक दृष्टि से अवांछनीय है। इस प्रकार के प्रदूषित वातावरण के फलस्वरूप सामाजिक असंतुलन में असमानता, संघर्ष, शोषण की प्रवृति, अत्याचार, अनाचार, व्याभिर, स्वयं के स्वार्थ हेतु समाज को बलि वेदी पर चढ़ा देना आदि बढ़ते जा रहे हैं। जिससे सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक पर्यावरण निरन्तर गड़बड़ा रहा है, जो नैतिक दृष्टि से भी अनुचित है। स्वार्थमय प्रवृत्ति को समाप्त कर पर्यावरण को व्यक्तिगत या संकुचित दृष्टि से न देखकर समग्र दृष्टि से विचार करने की आवश्यकता है। प्रकृति की सुन्दरता जो कला के रूप में हमारे सम्मुख प्रकट होती है जो हमारे दिल और दिमाग को लुभाती है। मानव समाज को इसके साथ दोहन इतना ही करना चाहिए जितना कि व्यक्ति एवं समाज के निर्वाह एवं विकास हेतु आवश्यक है। यदि कोई व्यक्ति विशेष अपने ही स्तर पर समाज हित में प्रकृति का दोहन कर रहा है जिससे संतुलन नहीं बिगड़ रहा है तो ऐसा कार्य नैतक दृष्टि से उचित है।

प्रायः मनुष्य की भौतिकवादी और विलासिता की प्रकृति के कारण पर्यावरण को हर प्रकार से नुकसान पहुँचा रहा है। मनुष्य ने अपने विकास की चरमोत्कर्ष पर पहुँचने के लिए इतना अन्धा हो गया कि प्राकृतिक संसाधनों का यथाशक्ति दोहन किया जैसे- पेड़-पौधों और प्राकृतिक वनस्पति से भरपूर वनों को काटकर वहाँ कंक्रीट इमारतें और कल-कारखाने बनाए, चट्टानों को खोदकर कोयला और अन्य खनिज पदार्थ निकाले गए, जल के भीतर से खनिज तेल, एवं प्राकृतिक गैस निकाली गई। तात्पर्य यह है कि मनुष्य ने अपने विकास की प्रथम अवस्था से ही पर्यावरण का दोहन प्रारम्भ कर दिया था। जब वह आग जलाना सीखा तब से आज तक मनुष्य अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए पर्यावरण का दोहन कर रहा है। पर्यावरण के प्राकृतिक संसाधनों के अधिकाधिक दोहन तथा प्रकृति विरोधी आचरण का यह परिणाम सामने आता है कि प्रकृति ने हम पर पलटवार करना शुरू कर दिया है जो हमारे सामने विविध रूप में आ रहे हैं जैसे कि समय पर मानसून का न आना,

Volume - 7 | Issue - 2 | February - 2017 | ISSN - 2249-555X | IF : 3.919 | IC Value : 79.96

तापक्रम अत्यधिक बढ़ जाना, बाढ़ की समस्या, कृषि बंजर हो जाना, ध्रुवों पर बर्फ तेजी से पिघलना, भू-स्खलन होना, भूकंप आना, जल स्तर का घट जाना, पशु-पक्षियों का विलुप्त हो जाना इत्यादि।

यदि मनुष्य अपने व्यक्तिगत अधिकारों की आड़ में अपने व्यक्तिगत हितों की पूर्ति करने को सामाजिक हितों के रूप में मान लेता है तो इसे प्रकृति का अनैतिक विनाश ही समझा जायेगा। व्यक्तिगत सूझ की कमी, ठीक ढंग से क्रियान्वित न किया जाना, किसी अधिकृत अधिकारी की गलत जानकारी के फलस्वरूप नुकसान हो जाता है और पानी, हवा एवं भूमि प्रदूषण को असामान्य घटना मान लेना, जंगलों का बिना किसी उद्देश्य के सफाया कर देना, अधिक भूमि को खेती के काम में लाना आदि कृत्यों से प्रकृति को प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से नुकसान पहुँचता है। विश्व के सभी देश आज किसी न किसी प्रकार के पर्यावरण संकट से ग्रस्त हैं। **विश्व पर्यावरण एवं विकास आयोग ने चेतावनी दी है कि यदि पर्यावरण की वर्तमान स्थिति में सुधार नहीं किया जाता तो तीन दशकों में भारत के जितना क्षेत्रफल (वन क्षेत्र) विश्व में नष्ट हो जायेगा और सऊदी अरब के क्षेत्रफल के बराबर भूमि बीहड़ रेगिस्तान में परिवर्तित हो जायेगी।** पर्यावरण की स्थिति इस स्तर पर दयनीय हो गयी है कि वह अब अपना और दोहन बर्दाशत नहीं कर पा रहा है। भारत सुनामी का कहर झेल चुका है अभी हाल ही में जापान में सुनामी का स्वरूप खण्ड प्रलय जैसा था। आइसलैण्ड के ज्वालामुखी से निकले राख और धुएँ के गुब्बारे ने भी कहर बरपाने का ही काम किया। चीन और हैती में आए भूकम्प की विनाशलीला हम देख चुके हैं। आंकड़े यह बताते हैं कि पिछले दो दशकों में दुनिया भर में आने वाली प्राकृतिक आपदाओं में चार गुना बढ़ोतरी पाई गई है। पर्यावरण से होने वाले विनाश के कारण आज विश्व के अधिकांश देश पर्यावरण संरक्षण पर बल देने लगे हैं। पर्यावरण संरक्षण भारत में प्राचीन काल से ही विद्यमान रहा है यही कारण है कि भारत अन्य देशों से ज्यादा बेहतर है। वैदिक और अन्य प्राचीन साहित्य में पर्यावरण संरक्षण के प्रति विशेष आग्रह दिखाई पड़ता है। लौकिक संस्कृत साहित्य में भी यह बात देखी जा सकती है। कालीदास जैसा कवि तो प्रकृति में ही जीता था। अत: हमें भी चेतने की आवश्यकता है, नहीं तो आगामी कुछ वर्षो में यह धरती जीने लायक नहीं रह जाएगी।

सामान्यत: उद्योगपति पर्यावरण सम्बन्धी नियमों एवं कानूनों को ताक में रखकर जल, वायु एवं भूमि प्रदूषण करते हैं और वे व्यक्तिगत आर्थिक लाभ कमाने हेतु जन साधारण के साथ प्रदूषण फैलाकर खिलवाड़ करते हैं। यह कार्य केवल कानूनी अपराध ही नहीं बल्कि नैतिक पतन भी है। प्रकृति की हानि परोक्षत: मानव की हानि है। उसके जीवन के साथ खिलवाड़ है। जानवरों का शिकार जो प्रतिबंधित है या वनस्पतियों को हानि पहुँचाने का कार्य, वनों की कटाई, जंगलों को नष्ट करना, विभिन्न जानवरों को मारकर उनकी खाल ऊँचे दाम पर चोरी छिपे निर्यात करने की घटनाएं आये दिन उजागर होती हैं। इस प्रकार के कृत्य केवल प्रकृति के साथ छेड़-छाड़ ही नहीं बल्कि पूरी दुनिया के साथ छेड़-छाड़ है। अत: ऐसे कार्य निश्चित ही अनैतिक एवं असमाजिक हैं। पृथ्वी मानव के अलावा असंख्य जीव जंतुओं एवं वनस्पतियों का भी घर है। अत: मानव को अपनी करतूतों पर लगाम लगानी चाहिए तथा **"जियो और जीने दो"** के सिद्धान्त का पालन करते हुए पर्यावरण सुरक्षा में जुट जाना चाहिए। **"स्वच्छ पर्यावरण ही स्वस्थ मानव जीवन का आधार है। यदि पर्यावरण प्रदूषण जारी रहा हो मानव जीवन का अस्तित्व खतरे में पड़ सकता है।"** पर्यावरण का असंतुलन मनुष्य के जीवन तथा स्वास्थ्य को ही प्रभावित नहीं करते वरन् मानव जाति के भविष्य पर प्रश्न चिन्ह लगाते हैं। अत: कहा जा सकता है कि पर्यावरण का मानव से गहरा संबंध है इन्हें एक-दूसरे के विपरीत व विरूद्ध न मानकर पूरक कहा जा सकता है। वर्तमान में मनुष्य अपनी स्वार्थ पूर्ति हेतु निरन्तर पर्यावरण को हानि पहुँचा रहा है जो आने वाले समय में उसके लिये भी भयंकर घातक सिद्ध होगी, पर्यावरण की धारणा व्यक्तिगत हित से नहीं बल्कि अंतर्राष्ट्रीय हित से जुड़ी हुई है और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर ही इस समस्या से निपटा जा सकता है। पर्यावरण आज एक ऐसा मुद्दा बन गया है कि विभिन्न देशों की राजनीतिक इकाईयाँ एकजुट होकर पर्यावरण से उत्पन्न समस्याओं पर चर्चा करके एक ऐसा निष्कर्ष लाने में जुट गई हैं कि जिससे मनुष्य के विकास के साथ-साथ पर्यावरण को भी नुकसान ना पहुँचे का भाव उत्पन्न हो पर्यावरण की समस्या को देखते हुए विगत 50 वर्षो में विभिन्न देश पर्यावरण संरक्षण की बात करने लगे हैं। आज पर्यावरण विचलन से प्रभावित होकर हम जो सजगता दिखा रहे हैं, उससे कहीं अधिक सजग हमारे प्राचीन ऋषि-मनिषी थे। हमारे ऋषियों ने प्रकृति का गहन अध्ययन किया, उन्होंने यह अनुभव किया कि हमारे जीवन का मूलाधार प्रकृति ही है। इसीलिए वे प्रकृति के प्रत्येक अंश में दैवी-आधान करते दिखते हैं।

मनुष्य के सोचने के दृष्टिकोण में विस्तृत आधार एवं सम्पूर्ण विश्व को एक परिवार आदि विचारों को हृदयगम करवाने हेतु सार्वजनिक एवं सार्वभौमिक शिक्षा व्यवस्था की अत्यन्त आवश्यकता है जो प्रकृति के उपयोग एवं रक्षा संबंधी सभी प्रकार की समस्याओं को दृष्टिगत रखते हुए प्रदान की जाए। हम एक-दूसरे को नैतिकता से प्रभावित करते हैं। विज्ञान ने आज इतना विशाल क्षितिज खोल दिये हैं जिसके द्वारा हम मानव एवं प्रकृति के परस्पर सह अस्तित्व को स्थापित करने में सक्षम हो पाते हैं। साथ ही यह भी सत्य है कि आधुनिक तकनीकी अविष्कारों ने एक दिन के तुच्छ लाभ के लिए समाज को सदियों का नुकसान पहुँचाया है। वैज्ञानिकों का सदैव उद्देश्य रहता है कि उनके परीक्षण एवं परिणामों से मानव मात्र के लिए उपयोगी सिद्ध हों और वे परिणाम व्यक्ति, समाज व राष्ट्र विशेष के लिए न होकर मानव मात्र को लाभान्वित करें ताकि उनके सोचने के नजरिये में विस्तृतता एवं वैज्ञानिकता आ सके। लेकिन दुर्भाग्य है कि वैज्ञानिक उग्र राष्ट्रवादी विचारों से ओतप्रोत होकर अन्य राष्ट्रों के नागरिकों के बारे में सोचने का कष्ट ही नहीं करते और वे स्वयं संकुचितता को लिए हुए रहते हैं। समाज के हित में किये गये कार्य को अनैतिक नहीं कह सकते, जबकि वैज्ञानिकों द्वारा भविष्य में संभावित खतरों को दृष्टिगत न रखते हुए केवल वर्तमान पूर्ति को सर्वोपरि समझकर कार्य करते हैं तो ऐसे कार्यो को अनैतिक कह सकते हैं। यदि मनुष्य ने प्रकृति को मशीनों के माध्यम से अपने ढंग से नियंत्रित करने का दु:साहस किया तो कालांतर में परिणाम इतने भयंकर हो सकते हैं कि मानव सभ्यता ही समाप्त हो जायेगी, प्रकृति का इस प्रकार अत्यधिक दोहन, अनैतिक कृत्य है। कहने का तात्पर्य स्पष्ट है कि मनुष्य प्राचीन काल से लेकर आज तक अपने सर्वांगीण विकास के लिए पर्यावरण का इतना अधिक दोहन कर चुका है कि आज पर्यावरणीय समस्या एक क्षेत्र विशेष की न होकर समूचे विश्व की हो गई है जिसके परिणामस्वरूप पर्यावरण एक ज्वलंत राजनैतिक मुद्दा बनता जा रहा है। अनवरनत बढ़ती जन चेतना, वायु एवं जल प्रदूषण, गैस दुष्प्रभाव, ओजोन परत की समस्या, कचरा व्यवस्थापन, आणविक ऊर्जा, अति जनसंख्या तथा तेल रिसाव इत्यादि सभी समस्याएँ जीवन की गुणवत्ता व ब्रह्माण्ड में पृथ्वी के अस्तित्व का संभावित चित्र प्रस्तुत करती है। यह विकास एवं विनाश की एक समग्रकारी व्यवस्था है जो सन्तुलन को स्वयं प्राकृतिक प्रकार्यो के माध्यम से बनाए रखती है लेकिन ये संतुलन आज समाप्त हो गया है। पर्यावरण अनके संकटों से ग्रस्त है। आज से 40 वर्ष पूर्व **रसेल कर्लसन** नामक विद्वान ने किसी काल्पनिक शहर जो हरा-भरा सुख-सम्पदा से परिपूर्ण था कि अकाल मृत्यु का भयावह दृश्य खींचा कि एक दिन ऐसा आएगा जब पेड़-पौधे सभी नष्ट हो जाएँगे पूरा शहर शमशान में बदल जाएगा, इस प्रकार की कल्पना को बहुत से लोगों ने मात्र भ्रम समझा और कहा कि ऐसा कभी नहीं हो सकता, परन्तु ज्यादा दिन नहीं बीते कि अमेरिका के औद्योगिक नगर **डेट्राइट** में उस दिन ऐसी बरसात हुई कि जिसके तन पर बूंदे पड़ी वह चीख उठा। कारखाने के धुएं से वायुमंडल में इतनी **सल्फर डाईऑक्साइड गैस** जमा हो गई कि बादलों के साथ रासायनिक क्रिया करके दहकते **तेजाब सल्फयूरिक एसिड** की वर्षा कर दी। सन् 1979 में इटली के शहर **'सेवेसो'** में तो कर्लसन की कल्पना ही सच हो गयी। हवा में अजीब गंध से मुर्गियाँ मरने लगी, बूढ़े खासने लगे। यह पता चला कि एक कारखाना ट्राइक्लोरो को नोल, पानी टी.सी.पी. नामक रसायन बनाता है स्वचालित मशीनें भी कोई तापमान नियंत्रित करने वाला स्विच खोलना भूल गया। **200 डिग्री सेल्सियस में टी.सी.पी. जहरीली डाई ऑक्साइड एक गैस** में बदल गई, रासायनिक धुएं के बादल चिमनी से निकले और सारे शहर की नाक में दम कर दिया। बिडम्बना यह है कि पिछले कुछ वर्षो में एटमी जाड़े के संकट का स्थान **'वैश्विक तापन'** और मानवीय हस्तक्षेप के कारण **'जलवायु परिवर्तन'** वाली चुनौती ने ले लिया है। पूंजीवादी जीवन यापन शैली में फिजूलखर्ची, स्वार्थी, उपभोक्तावादी मानसिकता प्रबल थी जबकि भारत जैसे विपन्न देशों में गाँधीवादी सोच के प्रति गहरा आकर्षण था।

भारतीय संस्कृति के अनुरूप प्रकृति को पूज्य समझते हुए मां का दर्जा देने की आवश्यकता है। मां अपने पुत्र-पुत्रियों के लालन-पालन एवं प्रगति हेतु स्वयं कष्ट भोगकर सुख देती है ना कि आत्म हत्या कर। मां की हत्या से पुत्र अनाथ हो जाता है। ठीक उसी प्रकार प्रकृति के विध्वंस से मानवता दुर्बल होगी। मनुष्य संसार के प्रति दृष्टिकोण एवं नैतिकता को अलग-अलग ढंग से नहीं देखा जा सकता अर्थात ये दोनों अभिन्न हैं। आज प्रकृति के अत्यधिक दोहन से सर्वव्यापी प्रभाव पड़ रहा है लेकिन स्वार्थ में अंधे होकर इस प्रकार के चिन्तन के लिये हम कोई दिमाग नहीं लगाते। मानव समाज और प्रकृति की एकता और प्रतिस्पर्द्धा में यह ध्यान देने की आवश्यकता है कि विश्व की सारी धरती और उसके विभिन्न क्षेत्र व उपक्षेत्र का सदैव शुद्ध पर्यावरण को बनाये रखने हेतु पूरा-पूरा ध्यान रखने की आवश्यकता है। हम अपने तुच्छ स्वार्थो से वशीभूत होकर आसपास के पर्यावरण को ही दूषित करने पर तुले हैं। लेकिन अब समय आ गया है कि हमें एकजुट होकर अपनी समस्या स्वयं ही सुलझानी होगी। मावन जागृति के चहुँमुखी विकास के स्वर्णिम भविष्य को स्वस्थ पर्यावरण के चश्मे से देखना सूर्खतापूर्ण होगा। पर्यावरण सुरक्षा की सम्पूर्ण जिम्मेदारी

Volume - 7 | Issue - 2 | February - 2017 | ISSN - 2249-555X | IF : 3.919 | IC Value : 79.96

मात्र सरकार पर नहीं थोपी जा सकती है। सभ्य समाज को भी इसकी नैतिक जिम्मेदारी लेनी चाहिए। आज प्रत्येक व्यक्ति को स्वच्छ और प्रदूषण मुक्त पर्यावरण में रहने के अपने अधिकारों के प्रति सजग होना चाहिए और अपने दायित्वों को समझना चाहिए। बिना किसी पूर्वाग्रह के स्वयं ही अपने कर्त्तव्यों को जान, उसकी जिम्मेदारी अपने कंधों पर धारण कर अधिकाधिक प्रयास करके पर्यावरण को प्रदूषण मुक्त करना चाहिए। हमारा उद्देश्य अपने गौरवशाली अतीत का गुणगान करना ही नहीं है, अपितु यह स्पष्ट करना है कि हम क्या थे, क्या हैं और इसी गति से चलने पर हम कहाँ पहुँचेंगे। विनाश की जिस आहट को हम आज भी सुन नहीं पा रहे हैं, उसे हमारे मनीषियों, चिंतकों ने शताब्दियों पूर्व ही भाँप लिया था। यथार्थ के धरातल पर उतरकर यदि अभी भी हमने सत्य को अंगीकार नहीं किया तो मानव सभ्यता ने अपने विनाश के लिए पर्याप्त संसाधन जुटा लिए हैं। यदि पृथ्वी पर निवास करने वाले मनुष्य यह समझने लगे कि उनके कृत्यों से ही स्वर्ग नरक बन रहा है, विशाल प्राकृतिक निधियों के भंडार वाली धरती खत्म हो चली है। भविष्य की बात छोड़ें, वर्तमान पीढ़ी का जीना भी दुर्लभ हो गया है। **"पर्यावरण संरक्षित तो जीवन सुरक्षित"** यह उक्ति मात्र एक कहावत नहीं है बल्कि जीवन का एक सत्य है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि पर्यावरण व मानव एक – दूसरे के पूरक हैं मानव के बिना पर्यावरण की कल्पना नहीं की जा सकती। अत: आज मानव को प्रकृति के साथ अपनी वृद्धि का तालमेल बिठाना होगा, इसके लिए हमें बहुत सारे सुखों का परित्याग करना होगा और सतत विकास ही हमारे लिए भविष्य के विकास का अन्नत आकाश साबित होगा। जिसमें मानव जाति निरन्तर विकास के लिए उड़ान भरने में सक्षम होगी।

आधुनिक युग में नैतिकता एवं अनैतिकता को अपने ढंग से लोग स्पष्ट करने में लगे हैं। प्राकृतिक विज्ञान, टैक्नोलॉजी को भला – बुरा कहने वालों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है। आज के समय की मांग है कि विभिन्न प्रकार के विज्ञान के अन्वेषण को मानवीकरण एवं समाजीकरण करने की आवश्यकता है। यदि प्रकृति के साधनों का समाज व मानवता के हितकर कार्यो में न होकर विध्वंस व कष्ट पहुँचाने के कार्यो में उपयोग होता है तो अनैतिक कार्य ही कहेंगे और प्रकृति का सही रूप में उपयोग न होकर दुरूपयोग है जिसे प्रतिक्रियावादी व अविवेकशील समझा जायेगा। आज के युग में प्रकृति पर किसी राष्ट्र या व्यक्ति विशेष का आधिपत्य समझकर मनमाने ढंग से अतिदोहन करना प्रकृति के प्रति दुराग्रह है। प्रकृति का सही ढंग से दोहन व उपयोग करने हेतु नये दृष्टिकोण के विकास की आवश्यकता जो व्यक्ति, समाज एवं राष्ट्र के हित से ऊपर उठकर मानव मात्र के हित में सोचकर ही पर्यावरण को शुद्ध कर सकते हैं। यदि मनुष्य इस संसार का केन्द्र बिन्दु है। सारी प्रकृति उसके अधीन है और वह दूसरे जीवों से गुणात्मक रूप से श्रेष्ठ है तो धरती भी एक केन्द्र है और बाकी सब इसके चारों ओर है। मानव ज्ञान की भौतिक शक्तियों आज प्रकृति की शक्तियों के बराबर पहुँच गई है। यह ओर भी आवश्यक है कि इन भौतिक शक्तियों के साथ नैतिक गुण भी उसी अनुपात में विकसित हो। सारांशत: यह कहा जा सकता है कि प्रकृति का संरक्षण ही मानव के दीर्घाजीवी होने की गारन्टी है। अत: प्रकृति के संरक्षण को प्राथमिक लक्ष्य बनाकर विभिन्न देशों की राजनीतिक इकाईयों को एकजुट होकर एक निश्चित नियम और कानून का आयोजन करना चाहिए जो विकसित और विकासशील देशों में समान भाव से लागू किया जा सके।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1 कौली, सोनोवाल, रीना: ' योजना, 'पर्यावरण एवं विकास' योजना भवन, नई दिल्ली, मई, 2012
2 श्रीवास्तव, बी.के.: पर्यावरण और पारिस्थितिकी, वसुंधरा प्रकाशन।
3 सिंह, एस.एन. : पर्यावरण भूगोल और पारिस्थितिकी के मूल तत्व, तारा बुक एजेन्सी।
4 व्यास, किशोरीलाल: भारतीय संस्कृति और पर्यावरण संरक्षण, क्लासिकल पब्लिशिंग कंपनी, नई दिल्ली
5 वर्मा, धनंजय: पर्यावरण चेतना, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
6 अवस्थी, नरेन्द्र मोहन : पर्यावरणीय अध्ययन, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा।
7 राठौड, उमेश : पर्यावरण एवं प्रदूषण, पूर्वांचल प्रकाशन, गोरखपुर।
8 मणि, दिनेश : पर्यावरण और बढ़ता प्रदूषण, इलाहाबाद।
9 जाटव, बी.एल. : पर्यावरण और शिक्षा, नई दिल्ली।
10 उपाध्याय, डी.पी. : पर्यावरण अध्ययन, अमन प्रकाशन, इलाहाबाद।
11 सिंह, जगदीश : पर्यावरण एवं संविकास, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
12 कौशिक एवं गर्ग : संसाधन एवं पर्यावरण, रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ।
13 चन्दोला, प्रेमानन्द : पर्यावरण और जीव, हिमाचल पुस्तक भण्डार, दिल्ली।
14 कुमार, सतीश व दीपशिखा: पर्यावरणीय अध्ययन, बी.बी.पी. पब्लिकेशन्स, मेरठ।
15 यादव, वीरेन्द्र सिंह : पर्यावरण वर्तमान एवं भविष्य, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
16 पाण्डेय, जगदीश चन्द्र: समाज और पर्यावरण, प्रगति प्रकाशन, जयपुर, राजस्थान।